कमलेश चंद्र जोशी
अध्यापक विज्ञान
राजकीय उच्चतर माध्यमिक
विद्यालय, चरधार, पौड़ी

जहां जीवन में घुला–मिला है विज्ञान

प्रधानाचार्य – अर्जुन सिंह नेगी

अध्यापक – नरेन्द्र सिंह नेगी (सामान्य), नरेश मुंडेपी (कला), विनोद नेगी (शारीरिक शिक्षा), संजय कोहली (अंग्रेजी), बेबी डंडरियाल (गणित), दिनकर बहुखंडी (गेस्ट टीचर –भाषा)

सी.आर.सी.सी. – रोशनी कुंवर (प्रभारी)

भोजनमाता – बीना देवी व शकुन्तला देवी

नामांकन – 52

"हां मेरे पिता चिरवान (कारपेंटर) हैं और इस काम में बहुत सारा विज्ञान लगता है। जैसे उचित बल के साथ आरी का इस्तेमाल। आरी में तेल लगाकर कम बल से काम कर लेना। लकड़ी के बोल्डर को ऐसे समान माप से काटना ताकि बराबर शेप और लंबाई के तख्ते–बल्ली निकल आयें।"

"मेरी मां खाना बनाती है लेकिन उसमें भी विज्ञान बहुत रहता है। वो पढ़ी–लिखी तो नहीं लेकिन जानती हैं कि सही मात्रा का प्रयोग करना होता है। सब्जी में सही मात्रा में नमक डालना और आटा गूंथते समय सही मात्रा में पानी का इस्तेमाल करना। वैसे ही एल.पी.जी. गैस का सही इस्तेमाल। वह जानती हैं कि गैस सिलिंडर कितने दिन चलने वाला है।"

"अब देखिये आपका ये कैमरा है, जिससे हम फोटो खींचते हैं। इसमें रौशनी की मात्रा, किरणों की दिशा और सामने की वस्तु जिसका फोटो लेना है उनका ज्ञान आवश्यक है।"

"विज्ञान तो कण–कण में है जैसे जंगल में जल स्रोतों के बनने से लेकर घर में पाइप से पानी लाने तक में। पानी घर तक लाने के लिए उसे पहले टंकी में स्टोर किया जाता है, फिर जाकर उसे ढलान में पाइप बिछाकर छोड़ा

जाता है, ताकि उसे बहने के लिए बल मिले। एक बार ढलान में उतरकर फिर उसे चढ़ाई वाले स्थान पर भी पहुंचाया जा सकता है। जहां नदी नीचे है और गांव ऊपर वहां पंप के जरिये पानी ऊपर फेंका जाता है।"

यह सुमित कोहली हैं जो कक्षा सात के छात्र हैं। राजकीय उच्चतर विद्यालय चरधार पौड़ी में पढ़ते हैं। वो मुझे समझा रहे हैं, विज्ञान क्या होता है और कहां–कहां होता है। सुमित सामाजिक और आर्थिक रूप से निर्धन माने जाने वाले उस समुदाय से हैं जिन्हें विज्ञान को समझने के लिए सीमित संसाधन मिलते हैं। लेकिन उन्हें भरोसा है कि विज्ञान को कहीं भी देखा जा सकता है। वे चॉक के टुकड़े से मुझे अणु विज्ञान समझाने की कोशिश करते हैं और यह भी बताते हैं कि भगवान को कैसे देखा जा सकता है। उनका दावा ये नहीं कि उन्होंने कभी भगवान देखा है। वे भरोसा करते हैं कि जिस चीज को सभी मानते हैं उसे मान लेना चाहिए, लेकिन उसका पता भी लगाते रहना चाहिए। वह मुझे बताते हैं कि ऊपर–नीचे तो वह नहीं हो सकता क्योंकि वहां तो अंतरिक्ष है जिसमें कई पिंड तैर रहे हैं। और विज्ञान की अब तक की जानकारी के अनुसार पृथ्वी ग्रह को छोड़कर कहीं भी जीवन नहीं है। पृथ्वी खुद ब्रह्मांड में तैर रही है। सुमित भरोसा करते हैं कि हो सकता है भविष्य में भगवान का ठिकाना मालूम पड़ जाय। वे आस–पास के भगवानों के बारे में बड़े क्रिटिकल हैं और बताते हैं कि पुजारी लोग मंदिर खोलकर लोगों को उल्लू बना रहे हैं। और लोग भी भगवान की मूर्ति में पैसे चढ़ाकर अपने लिए और पैसे और खुशी मांगते हैं। यह सब पूजा–पाठ के नाम पर मूर्खता है।

इस स्कूल में विज्ञान के अध्यापक हैं कमलेश चंद्र जोशी जी, जो यहां पिछले छह साल से काम कर रहे हैं। कमलेश जी अकादमिक जगत में

चर्चित नाम हैं। उन्होंने उत्तरकाशी से बी.एस.सी. और एम.एस.सी. किया उसके बाद बनारस से एल.टी. की ट्रेनिंग की। 1999 में इस सेवा में आने के बाद उन्होंने एम.ए. इन एजुकेशन भी कर लिया है। टी.पी.डी. (टीचर्स प्रोफेशनल डेवलपमेंट) की मॉडयूल राइटिंग में वे रहे हैं। प्रदेश में सी.सी.ई. (सतत एवं व्यापक मूल्यांकन) की पायलटिंग के लिए जिन शुरुआती 40 स्कूलों में काम हुआ, उसकी टीम का वे हिस्सा रहे। एक्टिविटी साइंस में रीजनल इंस्टिट्यूट अजमेर और एन.सी.ई.आर.टी. से उन्होंने प्रशिक्षण लिए हैं। राज्य में एस.सी.ई.आर.टी. द्वारा आयोजित होने वाले सेवाकालीन प्रशिक्षण में वे तीन–चार बार के.आर.पी. (मुख्य संदर्भदाता) रह चुके हैं। विज्ञान के शिक्षक हैं लेकिन हिंदी और गढ़वाली में कविताएं लिखते हैं। उनकी कविताएं 'युगवाणी' व अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुई हैं। उनके किये गए काम को ही समझने आज मैं उनके स्कूल पहुंचा हूं। इस स्कूल में अभी 52 बच्चे नामांकित हैं। प्रधानाध्यापक को लगाकर कुल आठ लोगों का स्टाफ यहां है। श्रीनगर से 30 किलोमीटर और पौड़ी से 9 किलोमीटर दूर के इस स्कूल में मुख्यतः कंडी गांव के बच्चे पढ़ते हैं। जिनमें से करीब 70 फीसद आबादी अनुसूचित जाति के बच्चों की है। पास में राजकीय इंटर कालेज क्यार्क भी है जहां डोबा, कुखड़, बारई, तैला आदि के बच्चे पढ़ने जाते हैं। इसी गांव में प्रबंधन का उच्च प्राथमिक स्कूल भी संचालित है। अच्छी बात ये है कि चरधार स्कूल में 52 विद्यार्थियों में से 25 बच्चियां हैं, जो दर्शाता है कि अभिभावक बच्चियों को प्राइमरी से आगे पढ़ाने में उत्साह प्रदर्शित करने लगे हैं।

तो सातवीं के बच्चे मुझे जानवरों की भोजन पचाने की प्रणाली के बारे में विस्तार से बताते हैं। घास–पत्ती जैसे ठोस पदार्थों को पचाने में जानवरों के दांत और आमाशय कैसे उनकी मदद करते हैं, इसका उन्होंने सूक्ष्म अवलोकन किया है। यहां तक कि उनके अवशिष्ट यानी गोबर को परखकर देखा है। यह भी बताते हैं कि आदमी में भी इस तरह का पाचन तंत्र पहले होता था, लेकिन धीरे–धीरे वो गायब होता गया। क्योंकि उसकी जरूरत आदमी को नहीं रही।

अब मैं सुमित और उसके सहपाठियों से बात करता हूं, उस प्रयोग के बारे में जिसमें वो अभी लगे हैं। वे मुझे बताते हैं कि वे दर्पण की मदद से प्रतिबिंब को समझने में लगे हैं। इसके लिए उन्होंने दो अलग–अलग कोण बनाये हैं और अपने दो लेन्सों की मदद से वे उनका प्रतिबिंब देख रहे हैं। किस स्थिति में दर्पण प्रतिबिंब दिखायेगा, रेखाओं से बने कोण और रेखाएं कितनी बड़ी होनी चाहिए कि प्रतिबिंब पूरा दिखाई देगा। यहीं वे मुझे धूप से बनी छाया में प्रतिबिंब को समझाने का प्रयास भी करते हैं। उत्तल लेंस की फोकल दूरी कैसे निकाली जाती है। आभासी और वास्तविक दूरी के बारे में भी वे मुझे समझाते हैं।

मैं बच्चों से पूछता हूं, यदि उन्होंने विज्ञान विषय न पढ़ा होता और अब जबकि वे विज्ञान पढ़ चुके हैं, इससे क्या फर्क पड़ता? यह भी कि विज्ञान के गुरुजी उन्हें कैसे सिखाते हैं?

बच्चे बार–बारी मुझे बताते हैं, विज्ञान नहीं पढ़ते तो बहुत फर्क पड़ जाता। विज्ञान उन्हें सोचने के लिए नयी दृष्टि देता है। कोई चीज ऐसी या वैसी क्यों है उसका कारण पता लगता है। जैसे सामान्य लोग मानते हैं कि सूरज पृथ्वी के चक्कर काटता है लेकिन विज्ञान हमें बताता है कि ऐसा नहीं है। पृथ्वी घूमती रहती है और उसके घूमने से कभी हम सूरज के सामने होते हैं और कभी पीछे। इसी से दिन–रात बनते हैं। दुनिया में ऐसे भी देश हैं जहां दिन और रात बहुत लंबे होते हैं छह–छह महीने तक लंबे। इसी तरह हमें कई चीजों के कारण पता चलते हैं। विज्ञान हमें चीजें कैसे हो रही हैं, उसके कारण जानने में मदद करता है। विज्ञान के कारण ही हम आज बाकी पशु–पक्षियों से आगे हैं। विज्ञान की मदद से वो सड़क कुछ ही दिन में बन जाती है जिसे बनाने में पहले कई साल लग जाते थे।

मैं अब दूसरी कक्षाओं का रुख करता हूं। यह बड़ा ही मजेदार स्कूल लगता है। हालांकि यहां धूप आने में बहुत समय लग गया। 10 बजे से 2 बजे तक इंतजार करना पड़ा तब बच्चे शायद इस ठंड को सहने के आदी हैं। मगर स्कूल के अध्यापक और मैं तो एकदम ठिठुर चुके हैं। क्योंकि मेरे लिए धूप के इतने लंबे इंतजार का यह पहला अनुभव है इसलिए शायद मैं कुछ

ज्यादा ही दांत किट–किटा रहा हूं। सामने की पहाड़ी में धूप खिली है इसलिए भी उसे पाने का अहसास बढ़ गया है। बड़ा जोरदार नजारा है, स्कूल की छत पर धूप चढ़ती है तो अंग्रेजी वाले गुरुजी उसे लपकने छत पर चढ़ जाते हैं। स्कूल के नीचे करीब 150 मीटर की दूरी पर पहाड़ी की ढलान पर धूप का एक टुकड़ा है, जिसकी खबर गणित के छात्रों को पहले से है सो वे अपनी मैडम को चुपके से खबर कर वहां चटाई बिछा देते हैं। इस तरह स्कूल, बिल्डिंग से निकलकर अपनी सरहद में जहां–तहां छिटक गया है। हां प्रधानाध्यापक साब के कक्ष में धूप सबसे पहले दस्तक देती है, मुख्य भवन में तो वह दिसंबर–जनवरी में पूरे समय छुट्टी रखती है। इसी का एक हिस्सा है पुस्तकालय और दूसरा है विज्ञान की प्रयोगशाला। शिक्षकों की चाय–पानी वाली अपनी कैंटीन भी यहीं एक हिस्से में दुबकी हुई है। जहां पी.टी. वाले विनोद नेगी सर आज मेरे लिए खास तरह की सब्जी पका रहे हैं। दाल और भात मिड–डे–मील वाले दे देंगे। प्रधानाचार्य अर्जुन सिंह नेगी सर छुट्टी पर हैं बेटी की शादी के लिए सो आज सामान्य विषय वाले नरेन्द्र सिंह नेगी सर कुशलता से उनका जिम्मा संभाले हुए हैं। उनसे लोक गायक नरेन्द्र सिंह नेगी जी के योगदान पर बात होती है।

मैं अब कक्षा–6 की कक्षा में जाता हूं जो प्रधानाध्यापक कक्ष के नीचे है, पहाड़ी को काटकर बनाये गए कक्ष में, इसलिए एकदम धूपविहीन है। यहां विज्ञान की कक्षा अब प्रधानाध्यापक सर लेते हैं, पहले कमलेश जी ही लिया करते थे। काम की अधिकता के कारण कुछ ही दिन पहले उन्होंने यह कक्षा छोड़ी है।

बच्चों से शुरुआती बातचीत और एक–दो खेल गीत कर लेने के बाद मैं पूछता हूं, आज बहुत काम कर लिया, भूख जैसी लगने लगी है। क्या आप

बता सकते हैं ये भूख क्यों लग जाती है हमें बार–बार? आपको भी लगती है या मुझे ही लग रही है?

बच्चे सवाल को और बड़ा कर लेते हैं। मुझे यहां से वहां घुमाते हैं। 'भूख नहीं लगेगी तो फिर क्या करेंगे सर', 'आप खाना खा लीजिये सर, फिर ऐसे सवाल नहीं आयेंगे', 'ऐसे सवाल जब आयें तो क्रेक–जैक खा लेना चाहिए', 'ठंडा लग गया होगा सर आपको', 'कोई बात नहीं सर इंटरवल में तो मिलेगा ही' मैंने सोचा नहीं था, ये ऐसे बात करेंगे। लगता है इस स्कूल में भय नाम की चीज नहीं। कैसे बेधड़क बात कर रहे हैं ये सब।

आपने मेरा सवाल समझ लिया हो तो जवाब बताने की जहमत उठाएंगे? मैं ऊंची आवाज में कहता हूं।

मेरी हालत देखकर एक बच्चा खिलखिलाकर कहता है, अरे सर जोर से बोलने में ताकत खर्च हो जाती है। अब आपको और 'भूख' लगेगी।

मैं उसी से पूछता हूं तो आप कह रहे हैं, बोलने से भूख लगती है?

'बोलने से लगती है', 'चलने से लगती है', 'दौड़ने से लगती है', 'कई तरह के काम करने से लगती है' बच्चे रेस्पोंड करते हैं।

अच्छा ये बताओ, क्या पेड़–पौधों को भी भूख लगती है?

हां पेड़ पौधे सजीव होते हैं, उन्हें भी खाना चाहिए।

वे क्या खाते हैं?

वे सी.ओ.टू. खाते हैं, नाइट्रोजन खाते हैं।

यह उन्हें कहां से मिलता है?

आस–पास के वातावरण से। वे पत्तियों से अपना भोजन बनाते हैं और

धरती से कई लवण सोखते हैं। उनकी जड़ें खाना तलाशती रहती हैं। वे पानी भी पीते हैं।

आप बच्चे तो लाजवाब हैं। मजा आ गया, यह सब आपको कौन बताता है?

उन्होंने बताया पहले कमलेश सर बताते थे, अब प्रधानाध्यापक सर बताते हैं।

कमलेश सर ने आपको और क्या–क्या बताया?

बच्चे याद करने लगते हैं, फिर बताते हैं पारदर्शी और अपारदर्शी चीजें। इनकी विशेषताएं बताते हैं।

मैं सामने खिड़की पर लगे शीशे की ओर इशारा करते हुए कहता हूं यह किसमें आएगा, पारदर्शी में या अपारदर्शी में?

बच्चे बताते हैं पारदर्शी में। शीशा पारदर्शी होता है।

तब मैं पूछता हूं क्या शीशा हमेशा पारदर्शी होता है, हम जिस शीशे में रोज अपनी सूरत देखते हैं वह क्या होता है?

बच्चे आपस में बहस करने लगते हैं फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं, नहीं कुछ–कुछ शीशे अपारदर्शी भी होते हैं। उनके उस पार नहीं देखा जा सकता। दर्पण में एक तरफ पॉलिश या कुछ लगा देते हैं, इसलिए वह अपारदर्शी हो जाता है।

मैं फिर अपना सवाल दोहराते हुए कहता हूं, इसका मतलब ये सामने वाला शीशा अपारदर्शी है?

नहीं, नहीं सर ये वाला थोड़े ही है। यह तो पारदर्शी है क्योंकि इसके उस तरफ कुछ नहीं लगा है।

मैं शीशे के पास जाकर देखना चाहता हूं मुझे तो इसके उस पार कुछ दिखाई नहीं दे रहा, ये कैसा पारदर्शी है।

फिर कुछ बच्चे मेरे साथ आ खड़े होते हैं और शीशे के उस पार देखने लगते हैं। और आपस में बहस करने लगते हैं। ये अपारदर्शी नहीं है क्योंकि इसके उस तरफ कुछ नहीं लगा है और ये पारदर्शी भी नहीं क्योंकि इसके उस

तरफ साफ कुछ दिखाई नहीं दे रहा। तब उनमें से एक कहता है यह अर्द्ध–पारदर्शी होगा।

मैं पूछता हूँ ऐसा क्यों होगा ये?

इसको ऐसे बनाया गया है कि इसके आर–पार न दिखाई दे। केवल रौशनी ही आर–पार आ सकती है।

मैं बच्चों की 'करके देखने की प्रवृति' और 'तर्क करने की शक्ति' को थैंक यू कहकर बाहर निकला और पुरानी बिल्डिंग में लगी कक्षा–8 की कक्षा में पहुंचा। यहां बच्चों ने मुझे बताया कि उन्हें विज्ञान में क्या–क्या पढ़ाया जाता है।

मैंने बच्चों से सवाल किया, ज्ञान और विज्ञान में क्या अंतर होता है?

बच्चों के लिए यह अलग सा सवाल था। लेकिन वे प्रयास करते हुए थोड़ी देर में जवाब बनाने की कोशिश करते हैं।

'विज्ञान भी एक तरह का ज्ञान ही है। इसे विज्ञान की किताब में पढ़ाया जाता है इसलिए विज्ञान है।'

मैं उन्हें और सोचने के लिए कहता हूं।

एक बच्ची बोलती है– 'विज्ञान खुद करके सीखना पड़ता है, जैसे लैब में हम करते हैं'।

एक बच्चा फिर जोड़ता है– 'जिसे बार–बार करते हैं और एक ही परिणाम आता है, वह विज्ञान है'।

और बताइए, मैं कहता हूं।

'विज्ञान हमें तर्क करके सीखने की प्रेरणा देता है'।

तर्क क्या होता है? मैं यह सवाल पूछता हूं तो बच्चे चुप रहते हैं। फिर मैं कहता हूं जैसे ब्लैक बोर्ड मेरे पीछे है आपके कहां है?

बच्चे कहते हैं, हमारे सामने है।

मैं फिर कहता हूं मैं तर्क करता हूं कि ब्लैक बोर्ड मेरे पीछे है, लेकिन आप

तर्क करते हैं कि ब्लैक बोर्ड आपके सामने है। इसमें किसका तर्क सही तर्क है आपका या मेरा?

बच्चे पहले कहते हैं हमारा, तब मैं एक बच्चे को उठाकर अपने बगल में खड़ा कर देता हूं।

अब हम दोनों कहते हैं कि ब्लैक बोर्ड हमारे पीछे है, अब बताइए?

बच्चे थोड़ी देर बातचीत करते हुए कहते हैं।

आप भी ठीक बोल रहे हैं और हम भी ठीक बोल रहे हैं।

इसमें विज्ञान की बात क्या है वह बताइए?

हम जिस स्थिति में हैं उसके बारे में बताते हैं।

और?

हमें चीजों को अलग–अलग तरह से देखने की कोशिश करनी चाहिए।

बच्चों से इस सन्दर्भ में लंबी बातचीत चलती है, बीच में कमलेश जी भी आते हैं, बातचीत जारी रहती है।

भोजन की घंटी बज चुकी है। भोजन के बाद मैं और शिक्षक बातचीत में मशगूल हैं। यह आभास होता है कि इस स्कूल में अध्यापकों के बीच बहुत अच्छा समन्वय है। अंग्रेजी वाले संजय कोहली सर आज परीक्षा के लिए प्रश्न पत्र बनवाने की डयूटी पर हैं, लेकिन मेरे आने की खबर से वह स्कूल में मिलने आ पहुंचे हैं। कला शिक्षक नरेश मुंडेपी सर मुझे गणित की शिक्षिका बेबी सुंदरियाल मैम से मिलवाते हैं। विनोद नेगी सर स्कूल में गेस्ट फैकल्टी के रूप में काम कर रहे दिनकर बहुखंडी जी से मिलवाते हैं। विनोद जी जिस स्कूटी से आये थे आज वह रास्ते में पंचर हो गयी थी। सो

सभी को उनकी गाड़ी को ठीक कराने की चिंता लगी हुई है, क्योंकि यहां पास में कोई पन्चर की दुकान नहीं है और पौड़ी से इस गांव के लिए एक ही टैक्सी चलती है। यहां चाय कक्ष में थोड़ी चर्चा नोटबंदी, थोड़ी प्रदेश के हालातों की तो थोड़ी–थोड़ी स्थानीय लोक संस्कृति और पलायन आदि की चल रही है। यह जानना बड़ा सुखद है कि इस स्कूल के शिक्षक साथी समसामयिक विषयों और स्थानीय जीवन पर बारीकी से नजर रखते हैं। उससे अच्छी बात ये है कि आपस में अच्छी साझीदारी हो रही है। कमलेश जी हम सबके साथ घर से लाया गया अचार और खुद के हाथ से बनाकर लायी गयी सब्जी साझा करते हैं। कमलेश जी ने बताया कि उनकी पत्नी एक दूर के स्कूल में पढ़ाती हैं और उनका सप्ताहान्त में ही घर आना हो पाता है। घर में बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना और बूढ़े मां–बाप की सेवा उनके जिम्मे है।

तभी मुझे कक्षा–7 की ओर फिर मुड़ने को विवश होना पड़ा, एक मधुर ध्वनि वहां से आ रही थी।

"हम स्वपोषी स्वपोषी छा

हम अपणु खाणु अफी बड़ोंदा

माटा में जमी रेंद्या कखी नी जांदा

डाला नी होंदा त हम जिंदा नी रौंदा"

मैं कैमरा तान देता हूं। बच्चों से ही मालूम पड़ता है यह सुमधुर गीत विज्ञान की पाठ्यचर्या का गीत है। कमलेश जी ने यह तैयार किया था और उसके माध्यम से बच्चों को स्वपोषी और परपोषी का अंतर आसानी से मालूम पड़ जाता है स्वपोषी और परपोषी दो टीमें बनीं थीं, जो अपना–अपना परिचय

दे रहे थे। गढ़वाली में होने से बच्चे इसको बड़े अपनत्व के साथ हिल–मिलकर गा रहे हैं। भाषा का माधुर्य यहां विज्ञान के जटिल ज्ञान को सहज और सरस बना डालता है। काश हम ऐसा सभी स्कूलों में देख पाते, जहां बच्चों को घर की भाषा को इस तरह से अपनापन मिल पाता।

तब तक कमलेश जी भी लैब में आ जाते हैं। वह मुझे बताते हैं आप हमारी जर्जर बिल्डिंग के मोह में न रहिएगा, ये देखिये हमने यहां कैसे–कैसे उपकरण सजा रखे हैं। वह मुझे बताते हैं कि प्रकाश (लाइट) पर काम करने के सारे इंस्ट्रूमेंट्स यहां हैं। उसी तरह चुंबक (मैगनेट) यहां हैं। उत्तोलक प्रथम और द्वितीय को यहां आप समझ सकते हैं और उनसे काम ले सकते हैं। केमिस्ट्री के सभी जरूरी उपकरण यहां उपलब्ध कराये गए हैं। यह तो एक पक्ष है विज्ञान पर काम करने के संसाधनों का। लेकिन, मुख्य काम तो है बातचीत। ढेर सारी बातचीत। तरह–तरह की बातचीत। बातें सबसे बड़ी एक्टिविटी होती हैं। परिवेशीय ज्ञान में बहुत सारा विज्ञान होता है। लोगों के जीवन में जहां–जहां विज्ञान है, जो बच्चों ने देखा है उसमें से विज्ञान के सिद्धांत निकालना। खेती–बाड़ी का विज्ञान, मोटी दालें भिगोने का विज्ञान, सिलबट्टे में ठूंगने का विज्ञान, रोटी में पल्थन लगाने का विज्ञान, कीचड़ में फिसलने का विज्ञान आदि विषयों पर हम लंबी बातचीत करते हैं और उन्हें खुद करके भी देखते हैं। पानी के साथ तरह–तरह के व्यवहार किये जाते हैं। पानी के ठोस, द्रव्य और उष्म रूपों को रटाने की कोई जरूरत नहीं। उन पर ऑब्जरवेशन कराएं तो प्रक्रिया और सिद्धांत दोनों मालूम पड़ जाते हैं। हम लोग नाटक, गीत और वाद्य ध्वनियों का खूब इस्तेमाल करते हैं। साधारण सा नजरिया है, पहले वो चीजें जो हमारे पास में हैं, उन सूक्ष्म चीजों में विज्ञान की परिघटनाओं को देखना और फिर स्थूल पर उन्हें आरोपित करना। कमलेश जी मुझे बताते हैं, संसाधन तो होने ही चाहिए, विज्ञान में जितने संसाधन हों उतना बेहतर और हम कह सकते हैं हमारे पास पर्याप्त संसाधन हैं। लेकिन, लोक में व्याप्त विज्ञान का संसाधन ही शायद सबसे सुलभ और सबसे प्रभावी संसाधन है। विज्ञान के ज्ञान को कुछ लोगों ने उपकरणों से ढक दिया है, वे नहीं जानते कि उपकरण तो जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का प्रारूप भर हैं।

कमलेश जी कहते हैं, मैं बच्चों के प्रश्नों से घिरा रहता हूं। बच्चे रोज कोई न कोई समस्या खड़ी करते रहते हैं मेरे सामने। जाहिर है मुझे सभी सवालों के जवाब नहीं मालूम होते। परावर्तन के संबंध में एक दिन एक बच्चा मुझसे पूछने लगा, सर ये बताइए जब किरण (रे) आसानी से नहीं आ पाती तो आसानी से वापस कैसे लौट जाती है। मैं इस सवाल को सुनकर हैरत में पड़ गया। मैंने उस बच्चे को शाबाशी दी। ऐसा चिंतन आसानी से नहीं आ पाता। मैं प्रोजेक्टर, मोबाइल आदि का काफी इस्तेमाल करता हूं, लेकिन इस तरह से कि वह बच्चे को आतंकित न करे। इस तरह से कि वह उसे अपने करने योग्य लगे।

बाद में मेरी बच्चों से इस संबंध में बातचीत होती है कि गुरुजी उन्हें विज्ञान किस तरह पढ़ाते हैं। बच्चे मुझे बताते हैं कि सर हमें चीजों को देखकर लाने के लिए कहते हैं। जैसे सूरज के ऊपर चढ़ने पर छाया का घेरा किस तरह कम होता जाता है? यह क्या है? यह क्यों होता है। वे ऐसी चीजों के बारे में हमें सोचने के लिए कहते हैं। तरह–तरह की पत्तियों को देखने और उनके ऐसा होने के बारे में जानने के बारे में। हम उनसे सवाल करते हैं तो वे हमें एक जवाब नहीं देते। पहले तो हमीं से चर्चा करवाते हैं, फिर बहुत सारे विकल्प हमारे सामने रख देते हैं।

मालूम पड़ा कि इस बार एल.पी.जी. के उपयोग पर स्कूल की एक बच्ची कविता पंवार का प्रोजेक्ट राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस के लिए चयनित हुआ है। इस पर स्कूल ने सामूहिक रूप से काम किया और पारंपरिक ज्ञान का इस्तेमाल विज्ञान से जोड़कर देखा गया। एल.पी.जी. के प्रयोग से पर्यावरण के संरक्षण पर क्या सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा, इसी बात को प्रोजेक्ट में बताया गया है। इसी बार सुमित का नाम भी 'इंस्पायर योजना' के लिए नामित किया गया है। कक्षा सात का एक छात्र जो पारिवारिक और शारीरिक वजहों से पढ़ने–लिखने की प्रक्रिया में थोड़ा पीछे रह गया, वह टेबल पर शानदार ध्वनियाँ बजा सकता है। कमलेश जी ने उसके टैलेंट को विशिष्ट ज्ञान की श्रेणी में रखा है। उसको इस काम में खुद को और बेहतर बनाने के लिए वह प्रेरित करते रहते हैं। बेहद शर्मीले इस छात्र के कान में गुरुजी ने कुछ कहा तो वह ढोल की ध्वनि निकालने लगा। फिर गुरुजी ने

लिखा– भांगड़ा तो वह भांगड़ा की ध्वनि निकालने लगा। फिर उन्होंने लिखा– छड़ेला, फिर रामढ़ा। वह लिखे हुए को देखकर वैसा ही बजाता गया। यह बहुत शानदार था, एकदम पैरों को थिरकने को मजबूर करने वाला। यकीन नहीं होता ब्लैक बोर्ड में लिखे हुए के आधार पर बजा देने वाले को क्या कहा जाता है उसे पढ़ना नहीं आता! कमलेश जी ने इस बच्चे पर चस्पां की गयी छवि को तब उखाड़ दिया, जब उसे स्कूल के वार्षिकोत्सव में बजाने का मौका दिया। तब से वह स्कूल का वाह उस्ताद कहलाने लगा है और खुद पर गर्व करता है।

स्कूल में नन्हे–मुन्हे वैज्ञानिकों की लहलहाती फसल को देखकर मेरे मन में एक ही बात आयी, गरीबी परिष्कृत–विज्ञान की चारण नहीं, उसकी जननी है। जरूरत बस कमलेश जोशी जैसा शिक्षक होने की है जो इस राज को ऐसे बच्चों के सामने उद्घाटित कर सके।

(कमलेश चंद्र जोशी से हुई भास्कर उप्रेती की बातचीत पर आधारित)